समण दीक्षा : एक परिचय

समणी सन्मतिप्रज्ञा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समण दीक्षा : एक परिचय

समणी सन्मतिप्रज्ञा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

© जैन विश्व भारती, लाडनूं (राजस्थान)

ISB No. 81-6195-014-0

प्रकाशक : समण संस्कृति संकाय
जैन विश्व भारती, लाडनूं-३४१ ३०६

संस्करण : १९९६

मूल्य : दस रुपये

लेज़र कम्पोजिंग : नवीन लेज़र प्रिंट्स
जे-९, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११० ०३२

मुद्रक : पवन ऑफसैट प्रिंटर्स
जे-९, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११० ०३२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशीर्वचन

युग परिवर्तनशील होता है। युग बदलता है उसके साथ कुछ आदमी बदले और संघ भी विवेकपूर्वक कुछ बदलाव लाये। जैन शासन में आचार्य, बहुश्रुती जो निरपेक्ष और मध्यस्थभाव से साधना करते हैं संघ की संभाल करते हैं उनको अधिकार दिया गया है कि समय-समय पर मौलिकता की सुरक्षा करते हुए आवश्यक परिवर्तन भी करे। इसी बात को सामने रखकर तेरापंथ ने एक नई श्रेणी का निर्माण किया उसका नाम है—समण श्रेणी। इस श्रेणी के सदस्य गृहत्यागी होते हैं। और एक तरह का नया संन्यास उनका होता है। कुछेक अपवादों के सिवाय उनकी चर्या साधु जैसी होती है। आज यह श्रेणी समाज के लिए बहुत उपयोगी साबित हो गई है। इसको प्रारम्भ करने में जितनी कठिनाई आयी आज उसकी उतनी ही प्रशस्ति हो रही है। उस श्रेणी के बारे में समाज को जनता को कुछ जानकारी मिले इसलिए एक छोटी पुस्तिका प्रकाशित हो रही है। आशा है जनता इससे लाभान्वित होगी।

गणाधिपति तुलसी
"अभ्युदय"
जैन विश्व भारती, लाडनूं

१५-४-९६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूमिका

श्रमण परम्परा हजारों वर्षों से चली आ रही है। तीर्थंकरों द्वारा जीए गए सत्य इस परम्परा के लिए प्रकाश स्तम्भ हैं। आत्मलक्षी व्यक्ति उस प्रकाश में एक-एक कदम बढ़ता हुआ चलता है। शताब्दियां बीतीं, सहस्राब्दियां बीतीं। समय के प्रवाह के साथ कुछ परम्पराएं लुप्त हो गईं, कुछ को परिवर्तित कर दिया गया, कुछ विकृत हो गईं। त्रैकालिक सत्यों को अपने-अपने स्वार्थों के लिबास पहना देने, अपनी सुविधा के ढांचे में ढाल लेने की प्रक्रियाएं तेजी से चलने लगी। तब आचार्य भिक्षु ने इसके विरुद्ध क्रांति की। परिणामस्वरूप तेरापंथ का उद्भव हुआ।

दो सौ पैंतीस वर्षों में तेरापंथ ने विकास की अनेक करवटें ली हैं। गणाधिपति श्री तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ ने तेरापंथ को युग की गति के साथ योजित किया है। विकास की गति तीव्र करने के लिए गणाधिपति गुरुदेव के मस्तिष्क में एक चिन्तन कौंधा, क्रियान्विति हुई, परिणामतः समणश्रेणी का उद्भव हुआ। समणश्रेणी की स्थापना के पीछे केवल प्रचार-प्रसार का उद्देश्य नहीं रहा, बल्कि साधना के क्षेत्र में विशिष्ट प्रयोग तथा आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व निर्माण के स्वप्न ने इसकी स्थापना के लिए प्रेरित किया। तेरापंथ की भूमिका पर यह एक सफल प्रयोग घटित हुआ। आज समणश्रेणी इक्कीसवीं सदी के संन्यास के रूप में जानी जा रही है। समणश्रेणी गणाधिपति श्री तुलसी की अभिनव कृति है। तेरापंथ की क्रांति की प्रयोगशाला है—समण दीक्षा। जीवन-रूपान्तरण का प्रथम चरण तथा गणाधिपति के कर्तृत्व की एक अनुपम झलक है—समणश्रेणी।

यह छोटी-सी पुस्तिका, जो आपके हाथ में है, समणश्रेणी से आपको परिचित कराती है। यद्यपि अपनी सोलह वर्ष की विकास यात्रा से इस श्रेणी ने देश और विदेश में अपनी एक पहचान बनाई है, फिर भी अभी तक काफी संख्या में लोग इसके आचार-विचार, क्रिया-कलाप, कार्यक्षेत्र तथा उपयोगिता से अनभिज्ञ हैं, अल्पभिज्ञ हैं और जानने के इच्छुक हैं। यह लघु पुस्तिका इस श्रेणी के बारे में जिज्ञासु व्यक्ति को संक्षिप्त किंतु सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरुदेव श्री की यह हार्दिक अभीप्सा है कि समणश्रेणी का इतिहास लिखा जाए। इतिहास आपके चरणों में समर्पित हो उससे पूर्व यह पुस्तिका 'पूर्व-पीठिका' के रूप में प्रस्तुत है। आशा है यह लघु प्रयास पाठकों को समणश्रेणी के वारे में सम्पूर्ण जानकारी देने में सफल होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रम

- समण दीक्षा क्या है? ६
- समणश्रेणी की पृष्ठभूमि १०
- समणश्रेणी के मानक १४
- आचार संहिता १८
- अनुशासन २०
- व्यवस्था २२
- दीक्षा २५
- साधना २७
- शिक्षा ३०
- यात्रा ३६
- संकल्प-पत्र ४३
- समण-प्रतिक्रमण ४५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समण दीक्षा क्या है?

- समण दीक्षा है अपने आपकी पहचान का एक अमोघ संकल्प।
- समण दीक्षा है जीवन के मौलिक मूल्यों का बोध देने वाला एक अभिनव अनुष्ठान।
- समण दीक्षा है मन को निर्ग्रन्थ बनाने का एक छोटा-सा उपक्रम।
- समण दीक्षा है एक ऐसा पड़ाव, जहां से मंजिल सामने दीखने लगती है।
- समण दीक्षा है विप्लवी शक्तियों के प्रतिवाद में उभरती हुई आत्मशक्ति का साक्षात्कार।
- समण दीक्षा है एक नया प्रयोग, जो अनेक प्रकार की संभावनाओं के वलय से आवेष्टित है।
- समण दीक्षा है जीवन का वह विराम, जहां से एक नये छंद का प्रारम्भ होता है।
- समण दीक्षा है अध्यात्मविद्या सीखने और मुक्तभाव से बांटने का एक नया अभिक्रम।
- समण दीक्षा है लोकोत्तर बनने की दिशा में किया गया प्रस्थान।
- समण दीक्षा है अपने समस्त परिवेश के प्रति सक्रिय रहने का मनोभाव।
- समण दीक्षा है मुमुक्षु और मुनि के मध्य एक सशक्त सेतु।
- समण दीक्षा है समय के भाल पर उदीयमान नये निर्माण का एक संकेत।
- समण दीक्षा है जाग्रत कल की उदग्रीव प्रतीक्षा में अंगड़ाई ले रहा अध्यात्म का अंकुर।
- अंधेरे में उजाला करने का प्रयत्न है—समण दीक्षा।

– गणाधिपति तुलसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समणश्रेणी की पृष्ठभूमि

तेरापंथ क्रांति का दूसरा नाम है। रक्तक्रांति, श्वेतक्रांति या हरितक्रांति नहीं, बल्कि अध्यात्म-क्रांति का अपर नाम है—तेरापंथ। 'आत्मा रा कारज सारस्यां, मर पूरा देस्यां' इस फौलादी संकल्प से जन्मा एक सच है—तेरापंथ। तेरापंथ एक आचार्य की अनुशासना से शासित है और एक ही विधान से मर्यादित है। तेरापंथ की प्रगति का श्रेय इसकी गौरवशाली आचार्य परम्परा को है। सक्षम, सबल, तेजस्वी और मेधावी आचार्यों ने तेरापंथ की मान-मर्यादा की सुरक्षा के साथ-साथ अपने नवीन अवदानों से इसकी श्री को वृद्धिगंत किया है।

तेरापंथ आचार्य परम्परा में आठवें आचार्य हैं—आचार्य श्री कालूगणी। श्रीमत् कालूगणी ने अपना उत्तराधिकार सौंपते वक्त युवाचार्य तुलसी को साध्वी समाज के शैक्षिक एवं बौद्धिक विकास का जो संकेत दिया था, आचार्य-पद पर आसीन होते ही उन्होंने उस कार्य को प्राथमिकता दी। प्रतिभा को परखा तथा स्वतंत्र चिन्तन के विकास को अवकाश दिया और साध्वी समाज के उन्नयन की पृष्ठभूमि तैयार होने लगी।

विकास का क्रम बना। दीक्षा से पहले शिक्षा के लिए पारमार्थिक शिक्षण संस्था का उदय हुआ। गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी के चिन्तन की धारा में नए-नए सपने तैरते हैं। मेवाड़ की ऐतिहासिक धरती उदयपुर १९६२ के आपने फिर एक स्वप्न देखा। उस वर्ष पट्टोत्सव के पावन प्रसंग पर गुरुदेव ने अपने संकल्पों को मूर्त्त रूप देने हेतु कुछ बिन्दुओं की चर्चा की, जिनमें एक था—'संघ में ज्ञान-विज्ञान की शाखाओं का रूप विकसित हो और साधु-श्रावक के बीच एक ऐसा वर्ग तैयार हो जो महावीर के सार्वभौम सिद्धान्तों को तीव्रगति से जन-जन तक पहुंचा सके।'

चिन्तन का यह बिन्दु समणश्रेणी के उद्भव का प्रथम संकेत था। उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय इसका कोई आकार-प्रकार न था। मात्र एक धुंधली-सी रेखा थी। उस रेखा को मानचित्र का रूप देने के लिए बहुश्रुत साधु-साध्वी समुदाय आचार्य श्री के उपपात में बैठा। चिन्तन की नई नीति प्रस्तुत करते हुए गुरुदेव ने कहा—बौद्ध दीक्षा की भांति हमारे यहां भी एक ऐसी दीक्षा आविष्कृत हो, जिसमें व्यक्ति कुछ समय के लिए दीक्षित होकर साधना और शिक्षा का अभ्यास करे तथा प्रचार-प्रसार में अपना योगदान दे। इससे नैतिक शिक्षा की अभिवृद्धि होगी तथा विदेशों तक जैनधर्म के सिद्धान्तों की बात पहुंचेगी।'

गुरुदेव का स्वप्न संकल्प बना। समय बीतता गया। संकल्प की सम्पूर्ति को अनुकूल वातावरण न मिला पर पुरुषार्थ ने कभी हार न मानी। दीर्घ एवं सतत् प्रयत्न से आखिर वह दिन आ ही गया जिसका सबको इन्तजार था। सन् १९९० का लाडनूं चातुर्मास। आचार्य श्री ने नए उजाले का इतिहास गढने के लिए पुनः अपना संकल्प उद्घोषित किया। भाद्र शुक्ला पूर्णिमा के दिन दीक्षा महोत्सव था। इस अवसर पर भावी रहस्य का उद्घाटन करते हुए गुरुदेव श्री ने कहा—कार्तिक शुक्ला द्वितीया के दिन दीक्षा महोत्सव होगा, विलक्षण दीक्षा महोत्सव। इस उद्घोषणा ने तेरापंथ समाज में भारी ऊहापोह पैदा कर दिया। विलक्षण शब्द की मनगढन्त व्याख्याएं होने लगी। अनेक प्रतिक्रियात्मक प्रश्न वातावरण में उछलने लगे—यह विलक्षण दीक्षा क्या होगी? क्या आज तक सामान्य दीक्षा ही होती थी? क्या उनको विदेश भेजा जाएगा? भारत के सारे लोग प्रबुद्ध हो गए, जो इन्हें विदेश जाने की आवश्यकता महसूस हुई? भारत के कोने-कोने में यह बात हवा की तरह फैल गई। जिज्ञासाएं उभरती गईं। समाधान पाने पत्र आने लगे। पर समाधान दे कौन? सब कार्तिक शुक्ला द्वितीया की प्रतीक्षा में थे।

विलक्षण दीक्षा की घोषणा से पूर्व उस श्रेणी के अनुशासन, व्यवस्था, आचार-संहिता, दिनचर्या, संरक्षण आदि के प्रारूपों पर घण्टों चिन्तन किया गया। परिवारिक जन भी इस नई नीति से उद्वेलित थे यह जानते हुए भी कि तेरापंथ की दीक्षा कोई टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी नहीं सीधा राजमार्ग है। कहीं अंधेरा नहीं, दिन का प्रकाश है। कुछ अभिभावकों ने विरोध भी किया क्योंकि उनके सामने नये मूल्य प्रस्थापन के लिए नींव डाली जा रही थी जिससे वे अनजान थे। अपने ही चिन्तन के चक्रव्यूह में उलझ-उलझकर वे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनिश्चिन्तता का अनुभव कर रहे थे। उन्हें इन बातों की चिन्ता थी—हमारी बेटियों का भविष्य क्या होगा? इनका जिम्मेदार कौन होगा? समाज की दृष्टि में इनकी क्या अवधारणा होगी? परिवार के साथ क्या संबंध रहेंगे? ये किनके अनुशासन में रहेंगी? इस तरह मकड़ी की भांति स्वयं जाल बुनते और स्वयं ही उसमें फंस जाते। उनकी यह चिन्ता निराधार नहीं थी। संस्था के अधिकारी भी इन प्रश्नों से अछूते नहीं थे।

लाखों लोगों में बढ़ती हुई जिज्ञासाएं, उत्कण्ठाएं समाहित होना चाहती थीं। पर नये तीर्थ के निर्माता मौन थे। उनका मौन उत्कण्ठाओं को और अधिक बढ़ा रहा था। पूरा वातावरण जैसे असमाहित हो रहा था। समाहित थीं केवल वे बहनें, जिन्हें इस नए पंथ पर प्रस्थित होना था क्योंकि सघन आस्था का दीप और समर्पण का अनमोल रत्न उनके पास था। समाहित थे अभिभावक वर्ग, जिन्हें समुचित और संक्षिप्त जानकारी देकर आश्वस्त कर दिया गया था और समाहित था साधु-साध्वी परिवार जिनकी जिज्ञासाओं को अनेक गोष्ठियों के माध्यम से विराम दे दिया गया और उन्हें विलक्षण दीक्षा का स्वरूप समझाया गया।

इस महायज्ञ में अपनी प्रथम आहुति देने के लिए छह मुमुक्षु बहिनें तैयार हुईं—मुमुक्षु सरिता (लाडनूं), मुमुक्ष सविता (लाडनूं), मुमुक्षु महिमा (भीनासर), मुमुक्षु कुसुम (इन्दौर), मुमुक्षु सरला (मोमासर) तथा मुमुक्षु विभावना (लाडनूं)।

कार्तिक शुक्ला द्वितीया का चिरप्रतीक्षित दिन। पूज्य गुरुदेव का सड़सठवें वर्ष में प्रवेश। छियासठ वर्ष की पूर्णाहूति पर छह दीक्षा का विलक्षण योग। चारों ओर प्रफुल्लित एवं प्रमुदित वातावरण। सूर्य सोया हुआ था, पर जनता जाग रही थी। लाडनूं शहर की गलियां, सड़के, घर सब उमड़ी जनमेदिनी से आपूरित थे। जैन विश्व भारती का प्रांगण जन-संकुल था। एकम की रात जैसे जागरण की रात थी। कतारों में खड़ी बसें, मोटरें किसी अन्तर्राज्यीय बस अड्डे की सूचना दे रही थीं। जयघोषों से वातावरण गुंजित हो रहा था। विलक्षण दीक्षा से पूर्व का वातावरण भी इसकी विलक्षणता की सूचना दे रहा था।

सूर्य का रथ गगन पथ पर प्रस्थित होने के साथ ही हजारों लोग सुधर्मा सभा में एकत्रित होने लगे। पूरा वातावरण दीक्षामय था। लगभग पचास

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हजार आंखें इस अपूर्व दृश्य की साक्षी बनने को आतुर थीं। यथासमय कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। दीक्षार्थिनी बहिनों के क्रांतिकारी, संशयातीत और समर्पण से ओत-प्रोत विचारों को सुनकर विशाल जनमेदिनी की धड़कने मानों थम गई हों। चारों ओर गहरी शांति, नीरव, निस्तब्ध वातावरण था।

नये वेश में उपस्थित ये मुमुक्षु बहिनें देवकन्या-सी प्रतीत हो रही थीं। सफेद, दूध-सा उज्ज्वल वेश उनकी आन्तरिक उज्ज्वलता को मानों प्रस्फुटित कर रहा हो। विलक्षण वेश ने विलक्षणता के एक पहलू को समाहित कर दिया। यह परिधान न मुमुक्षु जैसा था, न साध्वी जैसा, न इसाई साध्वी जैसा था न नर्सों जैसा। सुचिन्तन पूर्वक बनाया गया यह वेश जहां शरीर का सुरक्षा कवच था, वहां सादगी और संयम का परिचायक तथा जनता के आकर्षण का केन्द्र भी बना।

इस अभूतपूर्व दृश्य की साक्षी बनी हजारों आंखें तृप्ति का अनुभव कर रही थीं। जीवन में कुछ क्षण ऐसे आते हैं जो स्मृति प्रकोष्ठों में कैद हो जाते हैं। यह महोत्सव भी कुछ ऐसा ही था। महिनों तक इसकी चर्चा यत्र-तत्र सुनी जाती रही। कुछ लोग आचार्य तुलसी के कर्तृत्व की दाद दे रहे थे तो कुछ इन दीक्षित होने वाली बहनों के साहस को सराहना कर रहे थे। कुछ तेरापंथ के शुभ भविष्य की कल्पना कर रहे थे तो कुछ इस श्रेणी को तात्त्विकता की कसौटी पर कस रहे थे। गुरुदेव तुलसी ने इस श्रेणी की कसौटी के लिए लोगों को खुला अवकाश दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समण श्रेणी के मानक

गणाधिपति श्री तुलसी क्रियाशील व्यक्तित्व के धनी हैं। उनके जीवन के आदर्श हैं—गतिशीलता, उपयोगिता और पवित्रता। समण श्रेणी उनके उस त्रिकोणात्मक आदर्श का एक रचनात्मक पक्ष है। इसको इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध की उपलब्धि कहा जा सकता है। समणश्रेणी का उद्भव अचानक घटित घटना नहीं है और न ही यह महाव्रत दीक्षा का सरलीकरण है। यह श्रेणी आध्यात्मिक जीवन शैली का आधुनिक प्रयोग है। गणाधिपति श्री तुलसी ने अपनी सृजनधर्मिता से सामाजिक परम्पराओं का परिष्कार किया है, धर्म को नई परिभाषा दी है अध्यात्म को विज्ञान के साथ जोड़ने का साहस किया है।

समण दीक्षा संन्यास का एक अभिनव उपक्रम है। नये संन्यास के लिए नये विधि-विधान, नई वेश-भूषा, नए नाम और संबोधन का निर्धारण किया गया। ये नए मानक इस श्रेणी की अलग पहचान बन गए।

वेश-भूषा

वेश व्यक्तित्व की प्रथम झलक है। इससे व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य भी उजागर होता है। यह परम्परा-विशेष की पहचान भी देता है। गृहस्थ का वेश अलग होता है और साधुओं का अलग। वैदिक परम्परा में संन्यासी पीताम्बर धारण करते हैं। बौद्ध परम्परा में काषाय और जैन परम्परा में श्वेतवस्त्रों का प्रावधान है। भगवान् महावीर से चली आ रही इस परम्परा के अनुसार समण श्रेणी के परिधान का रंग श्वेत ही स्वीकृत हुआ।

तेरापंथ धर्म संघ में साधु-साध्वी का वेश २५० वर्षों में विभिन्न परिष्कारों और परिवर्तनों से गुजरता हुआ सुन्दरतम रूप ले चुका है। समणश्रेणी का वेश उससे कुछ भिन्न हो, यह सोचा गया। श्रेणी-प्रवर्तन से पूर्व अनेक प्रकार से इसके बारे में चिन्तन किया गया। आखिर जिस वेश को अन्तिम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप दिया गया वह है—सफेद साड़ी पर सफेद कवच, कवच पर गुलाबी रंग के वलय में कसीदा गया 'अर्हम्' तथा मुखवस्त्रिका के स्थान पर हाथ में सफेद मुख वस्त्र (रूमाल)। समणश्रेणी का यह परिधान जहां उपयोगी सिद्ध हुआ वहां आकर्षण का केन्द्र भी। इस वेश के निर्धारण में महाश्रमणी कनक प्रभा तथा उनकी सहवर्तिनी साध्वी वृन्द की भूमिका मुख्य रही है।

सामायिक सूत्र

सामायिक सूत्र दीक्षित जीवन का आधार सूत्र है। समण दीक्षा के लिए सामायिक सूत्र का नवीन ढंग से निर्माण किया गया। उसकी भाषा प्राकृत है तथा शब्दावली मूल सामायिक सूत्र से भिन्न है। इसमें पच्चक्खामि के स्थान पर उवसंपज्जामि (स्वीकार करता हूं) तथा वज्जयामि (छोड़ता हूं) शब्दों का बार-बार प्रयोग हुआ है। इसमें आगार सहित सावद्ययोग का त्याग तथा आन्तरिक वृत्ति-शोधन पर अधिक बल दिया गया है। इस सूत्र का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है—

भन्ते ! मैं सावद्योग का प्रत्याख्यान करता हूं/करती हूं।

मैं चतुर्विध समणधर्म—क्षांति, मार्दव, आर्जव और लाघवकी उपसम्पदा स्वीकार करता हूं/करती हूं।

मैं चतुर्विध आन्तरिक दोषों—क्रोध, मान, माया और लोभ का वर्जन करता हूं/करती हूं।

मैं पंचविध समणविरमण—प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान मैथुन और परिग्रह का वर्जन करता हूं/करती हूं।

मैं त्रिविध समण-अनुशासन—मन-अनुशासन, वचन-अनुशासन और काय-अनुशासन—की उपसम्पदा स्वीकार करता हूं/करती हूं।

मैं समणशील—शान्त सहावास की उपसम्पदा स्वीकार करता हूं/करती हूं।

मैं चतुर्विध पाप—कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य और परपरिवाद का वर्जन करता हूं/करती हूं।

मैं पंचविध समण विवेक—गमन विवेक, भाषा विवेक, भोजन विवेक उपकरण विवेक और उत्सर्ग विवेक की उपसम्पदा स्वीकार करता हूं/करती हूं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं चतुर्विध समण साधना—स्वाध्याय, ध्यान, अनुप्रेक्षा और आसन की उपसंपदा स्वीकार करता हूं/करती हूं।

मैं श्रुत सामायिक तथा दर्शन सामायिक की उपसंपदा स्वीकार करता हूं/करती हूं।

इसी सामायिक सूत्र के आधार पर समण-समणी अपनी साधना की भूमिका मजबूत कर महाव्रतों की ओर प्रयाण करते हैं।

वन्दना विधि

भारतीय जनमानस में संन्यस्त जीवन का एक अलग वैशिष्ट्य है। जिस क्षण संसार के बन्धनों को तोड़कर मुमुक्षु उस निर्बन्ध पथ पर प्रस्थित होता है, उसी क्षण वह सबके लिए पूजनीय/वन्दनीय बन जाता है। प्रत्येक परम्परा में संन्यस्त लोगों की पूजा विंधि, वन्दन विधि अलग-अलग होती है। जैनधर्म में साधु-साध्वी को तीन बार प्रदक्षिणा सहित 'तिक्खुत्तो पाठ' से वन्दन करने की विधि है। समणश्रेणी के लिए इस विधि का प्रयोग अनुचित तो नहीं, किन्तु उसकी अलग पहचान देने वाला नहीं था। अतः चिन्तनपूर्वक निर्धारित की गई इस विधि में समण-समणीवृन्द को वन्दना करने के लिए दो सम्मान्य शब्दों 'वन्दामि नमंसामि' (वन्दना करता हूं, नमस्कार करता हूं)' का चयन किया गया। प्रत्युत्तर में उनके लिए 'अर्हम्' शब्द का निर्धारण किया गया है। 'अर्हम्' शब्द वीतरागता का बोधक है। इसका मंत्र के रूप में जप भी किया जाता है।

नामकरण

दीक्षित होने वाला मुमुक्षु अपने सांसारिक घर, परिवार, रिश्ते-नाते, सबको अलविदा कह, सर्वथा नए जीवन में प्रवेश करता है। यह उसका दूसरा जन्म होता है। ब्राह्मण द्विज कहलाता है। द्विज का अर्थ है दो जन्म। एक जन्म मां के गर्भ से लेता है और दूसरा यज्ञोपवीत संस्कार से। साधु भी द्विज कहलाता है। एक जन्म शरीर का होता है दूसरा जीवन का। शरीर को मां जन्म देती हैं, जीवन को गुरु। जीवन के बिना शरीर के जन्म की बहुत सार्थकता नहीं होती। दीक्षा मुमुक्षु का दूसरा जन्म है। नया जन्म, नया काम। पूर्वनामों की पहचान नये अर्थों का उद्घाटन करे इसके लिए दीक्षित होने वाले व्यक्ति को नई संज्ञा दी जाती है। सांस्कृतिक तथा अर्थबोध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देने वाले नामों के पीछे प्रज्ञा शब्द योजित किया जाता है। साध्वी समाज में प्रभा, श्री, लता, विभा, आदि अनेक प्रकार के शब्द मूल नाम के पीछे जुड़ते हैं किन्तु समण श्रेणी के प्रत्येक सदस्य के नाम के पीछे 'प्रज्ञा' शब्द का ही चयन किया गया है। स्थितप्रज्ञा स्मितप्रज्ञा, मधुरप्रज्ञा, कुसुम प्रज्ञा, सरलप्रज्ञा और विशुद्धप्रज्ञा नींव के पत्थर बनने वाली समणियां हैं।

समण श्रेणी के प्राथमिक मानक इसकी अलग पहचान देते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार संहिता

व्रत आचार कहलाते हैं। व्रतों का समूह या नियमावली आचार-संहिता कहलाती है। किसी भी संगठन, संस्था अथवा सभा की निश्चित आचार संहिता होती है। इसके बिना गति-प्रगति नहीं हो सकती। आचार-संहिता मील का वह पत्थर है, जो लक्ष्य की ओर बढ़ने वालों को मार्ग का संकेत देता रहता है । समणश्रेणी के लिए निर्धारित आचार-संहिता समण-समणी के लिए मील के पत्थर अथवा दिशासूचक यंत्र के समान है। जैनधर्म में साधना का आधार माना गया है—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। साधु हो या गृहस्थ, उनके धार्मिक जीवन की भूमिका ये व्रत ही हैं। अन्य व्रत या नियम इन्हीं के इर्द-गिर्द होते हैं। समणश्रेणी की आचार-संहिता भी इन्हीं व्रतों पर आधारित है—

१. सामान्यत: जीव-हिंसा से विरत रहना।

२. सचित्त भोजन नहीं करना।

३. असत्य वचन नहीं बोलना।

४. अदत्त मकान या वस्तु का ग्रहण नहीं करना।

५. ब्रह्मचर्य का पालन करना।

६. असंग्रह व्रत का पालन करना।

किसी भी प्रकार की चल-अचल सम्पत्ति नहीं रखना।

रूपये-पैसे नहीं रखना।

आभूषण नहीं रखना।

ओढ़ने-बिछाने, पहनने के वस्त्र, पात्र आदि निर्धारित सीमा से अधिक नहीं रखना।

७. रात्रि-भोजन नहीं करना।

८. रात्रि में किसी प्रकार का खाद्यपदार्थ पास में नहीं रखना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. विकथा नहीं करना—वासना को उत्तेजित करने वाली, रस-लोलुपता, विग्रह और वैमनस्य बढ़ाने वाली बातचीत नहीं करना।

यह आचार-संहिता समण/समणी की साधना का अभिन्न अंग है। आचार की सुव्यवस्थित शृंखला में आबद्ध रहने वाला संगठन ही वास्तव में मजबूत, दीर्घकालिक और विशुद्ध संगठन होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुशासन

मंजिल की ओर कदम बढाते समय मार्ग में बहुत से दुरूह मोड़ आते हैं, जहां साधक की विवेक-चेतना पर आवरण आ जाता है। ऐसी अवस्था में अनुशासन, मर्यादा, नियम, विधि-विधान की सीमाएं उन्हें सही राह का बोध देते हैं।

अनुशासन उन्नत जीवन की पहचान है। अनुशासन जहां स्वच्छन्द आचरण पर रोक लगाता है वहां विकास के लिए स्वतंत्रता भी प्रदान करता है। वृक्ष की कलम को रोपते समय उसके चारों ओर सुरक्षा-पाली बांधी जाती है, बाड़ का घेरा लगाया जाता है। समणश्रेणी का यह नवजात पौधा अनुशासन की बाड़ के बीच अपने आत्मानुशासन को पुष्ट करता रहे—इस दृष्टि से इसके लिए कुछ अनुशासन की लकीरे खींची गईं। समणदीक्षा के प्रसंग के साथ एक प्रश्न उठा—इन पर अनुशासन किसका रहेगा? किसी गृहस्थ का अनुशासन इन पर हो, यह उचित नहीं। इस प्रश्न के समाधान में जो कुछ निर्धारित किया गया वह इस श्रेणी के लिए अनुशासन का पाठ बन गया—

१.समणश्रेणी पर आध्यात्मिक अनुशासन आचार्य का रहेगा।

२. समण साधुओं के और समणी साध्वियों के संरक्षण में साधना करेगी।

३. समणी कहीं भी अकेली नहीं जाएगी।

४. समण/समणी के अपने-अपने वर्ग में कोई एक परिवर्तित रूप से नियोजक या नियोजिका नियुक्त होता रहेगा/होती रहेगी।

५. समण/समणी अपने नियोजक/नियोजिका को सूचित किये बिना निवास स्थान से बाहर नहीं जायेगा/जाएगी।

६. समण किसी अकेली स्त्री के साथ और समणी किसी अकेले पुरुष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के साथ बात नहीं करेगा/करेगी।

७. 'गण में रहूं निर्दाव एकल्लो'—आचार्य भिक्षु के इस नीति वाक्य को सामने रखकर समण/समणी सामुदायिक जीवन जीते हुए भी किसी को अपना बनाने का प्रयत्न नहीं करेगा/करेगी।

८. समण/समणी प्रतिदिन संकल्प पत्र दोहराएगा/दोहराएगी।

९. मौलिक आचार या अनुशासन का अतिक्रमण होने पर समण और समणी आचार्य या आचार्य द्वारा निर्दिष्ट व्यक्ति के पास प्रायश्चित्त करेगा/करेगी।

१०. समणश्रेणी में दीक्षित होने के बाद भी कोई समण-समणी आचार और अनुशासन की दृष्टि से अयोग्य प्रमाणित हो जाए तो उसे श्रेणी से पृथक् किया जा सकेगा।

११. समण/समणी अपने-अपने वर्ग में सौहार्द और सहयोग का विकास करता रहेगा/करती रहेगी।

१२. समण/समणी व्यक्तिगत जीवन में अधिक से अधिक स्वावलम्बी और स्वनिर्भर रहने का अभ्यास करेगा/करेगी।

गुरुदेव श्री तुलसी एवं आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा निर्मित अनुशासन की ये धाराएं किसी भी देश के संविधान से कम नहीं हैं। अनुशासन की इन्हीं धाराओं के सहारे समणश्रेणी अपने पन्द्रह वर्षों की सफल यात्रा कर सकी है। तेरापंथ में अनुशासन थोपा हुआ नहीं है बल्कि प्रत्येक सदस्य द्वारा सहज स्वीकृत है। अनुशासन समणश्रेणी के लिए सुरक्षा कवच है। बाहरी कवच बाह्य वातावरण से केवल शरीर की सुरक्षा करता है, अनुशासन शरीर और जीवन दोनों की रक्षा करता है। वह कलात्मक जीवन जीने का पथ है। गणाधिपति श्री तुलसी के शब्दों में—'अनुशासन वह कला है, जो जीवन के प्रति आस्था जगाती है। अनुशासन वह आस्था है, जो व्यवस्था देती है। अनुशासन वह व्यवस्था है, जो शक्तियों का नियोजन करती है। अनुशासन वह नियोजन है, जो नए सृजन की क्षमता विकसित करता है। अनुशासन वह सृजन है, जो आध्यात्मिक चेतना को जगाता है। अनुशासन वह चेतना है, जो अस्तित्त्व का बोध कराती है। अनुशासन वह बोध है, जो कलात्मक जीवन जीना सिखाती है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवस्था

व्यवस्था सत्यमाप्नोति, सत्यं शिवत्वमश्नुते।
शिवं यत्र भवेत् तत्र, सौन्दर्यं सहजं भवेत्॥

व्यवस्था सत्य को प्राप्त करती है, सत्य शिव को। जहां शिव (कल्याण) होता है, वहां सौन्दर्य सहज घटित हो जाता है। पंचसूत्रम् का यह श्लोक व्यवस्था की फलश्रुति उजागर करता है। तेरापंथ का सौन्दर्य इसकी सुन्दरतम व्यवस्था के कारण निखरा है। एक गुरु और एक विधान आज तेरापंथ की पहचान बन चुका है। आचार्य के निर्देशन में सैकड़ो-सैकड़ों साधु-साध्वियां अपनी साधना निर्बाध रूप से कर रही हैं। पारिवारिक, सामाजिक या आध्यात्मिक—कैसा भी जीवन क्यों न हो, विकास के लिए व्यवस्था पक्ष की सुघड़ता जरूरी है।

समणश्रेणी की स्थापना तथा संख्यावृद्धि के साथ इसकी व्यवस्था को सुचिंतित आकर दिया गया। इस श्रेणी की व्यवस्था दो भागों में विभक्त है—१. सम्पूर्ण व्यवस्था। २. वर्ग व्यवस्था। सम्पूर्ण व्यवस्था की मुखिया नियोजिका कहलाती है और वर्ग की मुखिया निर्देशिका। ये दो व्यवस्थाएं परिवर्तनशील हैं। इस बदलती व्यवस्था में किसी भी योग्य समणी का नियोजिका पद के लिए चयन किया जा सकता है। पद-मुक्ति के पश्चात् वह एक सामान्य समणी के रूप में साधना करती है। यही बात निर्देशिका के लिए भी है। आज जो समणी निर्देशिका के रूप में अन्य तीन समणी का निर्देशन करती है कार्यकाल मुक्ति के बाद किसी अन्य समणी के निर्देशन में उतनी ही प्रसन्नता के साथ अपनी साधना गतिशील रखती है। समभाव की यह विलक्षण व्यवस्था है।

इस परिवर्तनशील व्यवस्था के दो लाभ सामने आते हैं—

१. पद-प्रतिष्ठा के प्रति अंहकार का न जागना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. अनेक समण/समणियों की योग्यता का अंकन और निर्माण।

सम्पूर्ण व्यवस्था

समणश्रेणी में नियोजिका-पद सर्वोच्च पद होता है। नियोजिका समणी पूरी श्रेणी के विकास और ह्रास की उत्तरदायी होती है। श्रेणी के परिप्रेक्ष्य में इनका कार्यक्षेत्र विस्तृत होता है। नियोजिका के मुख्य कार्य हैं–

- वस्त्र, पात्र, चिकित्सा, सेवा आदि की व्यवस्था करना।
- सामूहिक कार्य का विभाजन करना।
- चित्त-समाधि अथवा वर्गों का निर्धारण करना।
- सामूहिक गोष्ठियों का संचालन करना।
- आचार, अनुशासन, नियम, विधि-विधानों का पालन करवाना।
- शैक्ष समणी की सार-संभाल की व्यवस्था करना।
- अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था करना।
- श्रेणी की सारणा-वारणा करना।

नियोजिका समणी गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी तथा आचार्य श्री महाप्रज्ञ, महाश्रमणी साध्वी प्रमुखाश्री कनकप्रभाजी तथा महाश्रमण के निर्देशन में ये सारे कार्य संचालित करती है। जो समणी जब तक इस पद पर रहती है, अपने दायित्व का पूरी निष्ठा के साथ निर्वहन करती है। समणी नियोजिका अपने समणीवर्ग की मुखिया होती है और समण नियोजक समण वर्ग के। आज तक के कालक्रम में निम्नांकित समण/समणी नियोजक और नियोजिका पद को अलंकृत कर चुकी हैं/कर रही हैं–

समणी	नियोजिका	स्मितप्रज्ञाजी (लाडनूं)
"	"	मधुरप्रज्ञाजी (भीनासर)
"	"	परमप्रज्ञा जी (वीदासर)
"	"	मंगलप्रज्ञा जी (मोमासर)
समण	नियोजक	स्थितप्रज्ञजी (बाव)
		मानवप्रज्ञजी (सरदारशहर)

वर्ग व्यवस्था

प्रायः चार-चार समणी का एक वर्ग होता है। इनमें एक को मुखिया बनाया जाता है, जिसे निर्देशिका कहते हैं। निर्देशिका का कार्यक्षेत्र सीमित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है। उसका दायित्व होता है सहवर्ती समणियों के शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य, साधना, शिक्षा आदि का विकास करवाना। आचार, अनुशासन, नियम आदि की अनुपालना करवाना। साधुत्व के योग्य संस्कार देना। स्वयं स्वावलम्बी रहते हुए सहवर्ती समणियों को श्रम, सेवा और स्वालम्बन की प्रेरणा देना। उसके ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि के लिए जागरूक रहना। वक्तृत्व, लेखन आदि के लिए प्रेरित करते रहना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीक्षा

समण दीक्षा संन्यस्त जीवन का एक प्रयोग है। भगवान् महावीर ने दो प्रकार के धर्मों का प्रतिपादन किया—अगार धर्म और अनगार धर्म श्रावक धर्म और मुनिधर्म। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह (पंच आचार) का पूर्णतः यावज्जीवन पालन करना अनगार धर्म है। इन नियमों का पूर्णरूप से नहीं किन्तु एक सीमा तक पालन करना अगार धर्म है। इसे गृहस्थ धर्म भी कहते हैं। समण दीक्षा न मुनिधर्म की चर्यागत कठोरता से आबद्ध है न गृहस्थ जीवन की तरह सर्वथा स्वतंत्र। गृहस्थ और मुनि जीवन के बीच एक सेतु है—समण दीक्षा। यह महाव्रत और अणुव्रत की मध्यवर्ती साधना है। इस दीक्षा में दो, तीन, या पांच महाव्रत नहीं, बल्कि अहिंसा, सत्य आदि पांच व्रत ग्रहण किये जाते हैं। यात्रा के लिए वाहन का प्रयोग तथा औद्देशिक आहार करना इनके लिए वैकल्पिक विधान है।

समण दीक्षा के दो रूप हैं—सावधिक समण दीक्षा और यावज्जीवन समण दीक्षा।

सावधिक दीक्षा

सावधिक का अर्थ है—अवधि सहित। कोई साधक जीवन भर संन्यास मार्ग नहीं अपना सकता और वह संन्यस्त जीवन का अनुभव भी करना चाहता है तो समण बन सकता है एक वर्ष के लिए, दो, तीन या पांच वर्ष के लिए। मुनि दीक्षा में सावधिक दीक्षा का विकल्प नहीं हैं।

इस वैकल्पिक प्रावधान के पीछे दो दृष्टियां रही हैं—

१. जैन दर्शन पर अनुसंधान करने वालों को प्रायोगिक शिक्षण मिल सके।

२. साधक जीवन से प्रशिक्षित होकर अपने गृहस्थ जीवन को अच्छा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बना सके।

सावधिक समण दीक्षा में जिस अवधि तक साधक इस साधना में रहता है पारिवारिक संबंधों, रिश्तों-नातों को उस अवधि तक विराम देना होता है। समण-परिधान, भिक्षाचर्या तथा उसी अनुशासन और आचार का पालन करना होता है, जो यावज्जीवन वालों के लिए निर्धारित की गई है। बैठना, उठना, चलना, बोलना सभी क्रियाएं संयमित हो जाती हैं। निश्चित अवधि पूरी हो जाने के बाद वह गृहस्थ जीवन में भी जा सकता है, यदि वह चाहे तो मुनिधर्म को भी स्वीकार कर सकता है। आज तक इस सावधिक शृंखला में बारह भारतीय भाई तथा तीन विदेशी भाई बहिनें (१ भाई २ बहिनें) दीक्षित हो चुके हैं। उनमें से सात साधकों ने मुनिधर्म को अंगीकार किया है।

यावज्जीवन दीक्षा

जीवन भर के लिए समणधर्म को स्वीकारना यावज्जीवन समण दीक्षा है। उसमें भी दो विकल्प हैं। यदि साधक जीवन भर समण-पर्याय में साधना करना चाहे तो कर सकता है और यदि वह कुछ वर्ष इसमें साधना कर मुनि दीक्षा स्वीकार करना चाहे तो भी कर सकता है। अभी तक इस श्रेणी में यावज्जीवन दीक्षित होने वाले समण/समणी का लक्ष्य मुनिधर्म स्वीकार करना रहा है, किन्तु प्रथम विकल्प के लिए भी इसमें अवकाश है। वर्तमान में इक्आसी समणियां (८१) इस साधना में यावज्जीवन के लिए संकल्पित हैं, जिनका लक्ष्य अग्रिम श्रेणी में प्रवेश करना है। अब तक तीस समणी मुनिभूमिका में प्रवेश कर चुकी हैं। वर्तमान में इस श्रेणी में पांच समण साधना कर रहे हैं उनमें से तीन यावज्जीवन के लिए तथा दो सावधिक हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधना

तेरापंथ में समणश्रेणी का उद्‌भव किसी विशेष लक्ष्यपूर्ति के लिए हुआ है। इसका लक्ष्य मुख्यतः तीन करणीय कार्यों के साथ स्पष्ट होता है—साधना, शिक्षा और प्रचार-प्रसार। शिक्षा और प्रचार-प्रसार के कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पादित करने के लिए जीवन को विभिन्न प्रयोगों से साध लेना आवश्यक है। साधना आत्म-मर्यादा है। इसे स्वीकार कर चलने वाला व्यक्ति स्वीकृत संकल्पों की गहराई में उतर सकता है, उनकी ऊंचाई को छू सकता है। इमारत की ऊंचाई के लिए गहरी और मजबूत नींव की आवश्यकता है। जितनी गहरी नींव, उतनी ऊंची इमारत और जितनी ऊंची इमारत उतना जनाकर्षण का वह केन्द्र भी। साधना की गहराई भी व्यक्तित्व को ऊंचाई प्रदान करती है और वह ऊंचाई जीवन को सार्थक करने में सफल होती है।

तेरापंथ एक प्रयोगशाला है। इसमें समय-समय पर नित नये साधना के प्रयोग होते रहते हैं। इतिहास बताता है आद्य प्रवर्तक आचार्य भिक्षु कई बार आहार लेकर गांव के बाहर चले जाते। वृक्ष की छांव में पात्र रखकर स्वयं तपती रेत में घण्टों-घण्टों आतापना लेते। आतापना लेना कठोर साधना का एक प्रकार है। ऐसे एक नहीं, अनेक उदाहरण तेरापंथ इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णाक्षरों में लिखे हुए हैं। इस शासन-समुद्र में ऐसे-ऐसे रत्न हुए है और हैं, जिन्होंने अपनी साधना से अपने को, तथा संघ को मजबूती दी है।

समण श्रेणी के सामने साधना का विस्तृत क्षेत्र है। साधना की प्राचीन पद्धतियों के साथ-साथ आधुनिक ध्यान योग के प्रशिक्षण व प्रयोगों का भी उनके लिए अवकाश है। गुरुदेव श्री तुलसी तथा आचार्य श्री महाप्रज्ञ द्वारा निर्दिष्ट एवं निर्धारित विविध प्रकार के प्रयोगों से अपने आपको भावित करती हुई यह श्रेणी अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विविध प्रयोग

समणश्रेणी में साधना के लिए दो भूमिकाएं हैं—सामूहिक साधना और व्यक्तिगत साधना।

सामूहिक साधना

साधना के वे प्रयोग जो सब साथ मिलकर करते हैं, वह सामूहिक साधना है। समणश्रेणी में ध्यान, जप, स्वाध्याय आदि कुछ ऐसे अनुष्ठान हैं, जिन्हें सामूहिक किया जाता है। इन अनुष्ठानों की समय-सीमा निर्धारित होती है। अष्टमी, चतुर्दशी तथा पक्खी के दिन 'कायोत्सर्ग प्रतिमा' की जाती है। यह प्रतिमा ध्यान का एक विशेष प्रयोग है। इसके माध्यम से अपने स्वरूप को जानने के लिए विजातीय तत्त्वों का विवेक किया जाता है। क्रोध आदि चार कषाय, भय, शोक, जुगुप्सा (घृणा) मिथ्यात्व, काम (विषय-वासना) आदि विजातीय तत्त्व हैं। ये निरन्तर आत्मा को मलिन करते रहते हैं। कायोत्सर्ग प्रतिमा में स्थित होकर समण/समणी सबसे पहले इन विभावों को आत्मा से पृथक् देखते हैं। विगत दिनों में यदि इनका उदयभाव व्यवहार से प्रकट हुआ हो तो उसका प्रतिक्रमण करते हैं, वर्तमान में इनका संवर करते हैं तथा भविष्य में ऐसा न करने का संकल्प लेते हैं। कायोत्सर्ग प्रतिमा का यह प्रयोग साधक को अध्यात्म की ऊंचाइयों पर ले जाने वाला है, वहीं व्यावहारिक जगत् में शान्त सहवास का वातावरण निर्मित करता है और आन्तरिक वृत्तियों का परिष्कार करता है। इस प्रयोग की कालावधि पैंतालीस मिनट की निर्धारित है।

उक्त प्रयोग श्रेणी के सभी सदस्य साथ बैठकर करते हैं। इनके अतिरिक्त कुछेक ऐसे प्रयोग भी हैं, जिन्हें सब साथ मिलकर नहीं करते किन्तु उन्हें करना सबके लिए अनिवार्य है। आसन-प्राणायाम आदि योग साधना तथा तप के कुछ प्रयोग सबके लिए जरूरी है पर सब साथ में करें यह अनिवार्य नहीं। अष्टमी, चतुर्दशी तथा पक्खी के दिन 'कायोत्सर्ग प्रतिमा' दो बार की जाती है। तप के प्रयोग में सामान्यतया प्रत्येक समण/समणी के लिए एक वर्ष में कम से कम तीस उपवास/पैंतालीस आयंबिल/साठ एकासन/साठ दिन विगय-वर्जन करना आवश्यक है।

व्यक्तिगत साधना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान, तप, जप आदि प्रयोग साधक की आन्तरिक पवित्रता में निमित्त बनते हैं। ये जितने-जितने पुष्ट होते हैं, चेतना का ऊर्ध्वारोहण उतना-उतना अधिक होता है। अपनी रुचि के अनुसार ध्यान आदि के विशेष प्रयोग समणश्रेणी में चलते रहते हैं। विभिन्न प्रकार के ध्यान के प्रयोगों से शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा होती है। मंत्रादि के जप से आन्तरिक शक्तियों का जागरण होता है। तप के प्रयोगों से आन्तरिक मलिनता दूर होती है। अनुप्रेक्षा के द्वारा वृत्तियों का शोधन होता है। इन्हीं उद्देश्यों को सामने रखकर समणीवृन्द द्वारा ये सब प्रयोग व्यक्तिगतस्तर पर संकल्पपूर्वक किये जाते हैं।

नया परिवेश : नई भूमिका

समणश्रेणी में दीक्षित होते ही उनके व्यवहार, आचार-विचार के निर्माण का विशेष प्रयत्न किया जाता है, जिसमें स्वभाव-निर्माण की अनुप्रेक्षाएं, संकल्प शक्ति के प्रयोग, विशेष प्रकार के आसन-प्राणायाम आदि करवाये जाते हैं। बाह्य-विकास के साथ-साथ आन्तरिक-विकास के प्रयोग समानान्तर चलते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिक्षा

(अध्ययन)

गणाधिपति श्री तुलसी के आचार्य काल में तेरापंथ ने शैक्षणिक ऊंचाइयों का संस्पर्श किया है। समणश्रेणी शिक्षा के नवीन प्रयोगों के लिए हैं, उनमें से एक है आधुनिक ज्ञान-विज्ञानयुक्त शैक्षिक विकास। पारम्परिक शिक्षा के साथ यदि युगीन संदर्भों को न जोड़ा जाए तो वह शिक्षा गति प्रदान नहीं कर सकती। किसी संगठन या संस्था की प्रगति का अंकन उसके सुशिक्षित सदस्यों के आधार पर किया जा सकता है।

शिक्षा का उद्देश्य

सामाजिक क्षेत्र में शिक्षा आजीविका से जुड़ी हुई है। जीवन-निर्वाह के लिए शिक्षा आलम्बनभूत होती है, किन्तु एक मुमुक्षु/साधक के लिए शिक्षा ग्रहण का यह उद्देश्य कदापि नहीं हो सकता। शिक्षा-ग्रहण के उद्देश्य की ओर इंगित करते हुए दशवैकालिक सूत्र कहता है—

१. सुयं मे भविस्सई (मुझे श्रुत प्राप्त होगा)।
२. एगग्गचित्तो भविस्सामि (मैं एकाग्रचित्त होऊंगा)।
३. अप्पाणं ठावइस्सामि (मैं आत्मा को धर्म में स्थापित करूंगा)।
४. ठिओ परं ठावइस्सामि (मैं धर्म में स्थित होकर दूसरों को इसमें स्थापित करूंगा)।

ये चार सूत्र बताते हैं कि अध्ययन डिग्री या आजीविका के लिए नहीं, आत्मोत्कर्ष के लिए किया जाना चाहिए। समण/समणी के सामने आत्मोत्कर्ष का लक्ष्य स्पष्ट है।

शिक्षा के विभिन्नरूप

समणश्रेणी के सामने शिक्षा का विस्तृत क्षेत्र है। किसी भी उपयोगी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान-विज्ञान की शाखा के लिए उन्हें खुला अवकाश है। यही कारण है कि इस श्रेणी में शिक्षा के अनेक रूप उद्घाटित हुए हैं।

स्नातक

शिक्षा का प्रथम पड़ाव है स्नातक (बी.ए.) तक का अध्ययन—समणश्रेणी के प्रायः सदस्य स्नातक हैं। स्नातक तक के अध्ययन की व्यवस्था पारमार्थिक शिक्षण संस्था के अन्तर्गत ब्राह्मीविद्यापीठ (कॉलेज) में है। दीक्षा से पूर्व प्रायः सभी मुमुक्षु बी.ए. तक की शिक्षा ग्रहण कर लेती हैं। यदि किसी कारणवश उनकी शिक्षा पूर्ण नहीं हो पाती है तो समणी बनने के बाद भी उसके लिए व्यवस्था की जाती है।

स्नातकोत्तर

इस श्रेणी में उच्च शिक्षा का भी पूरा-पूरा अवकाश है। जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) उच्च शिक्षा का एक 'विलक्षण' संस्थान है। यहां प्राच्य विद्याओं के साथ आधुनिक विद्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करवाया जाता है। वर्तमान में समण श्रेणी समण में सत्तर समणी तथा तीन समण विभिन्न विषयों में स्नातकोत्तर (एम.ए.) हैं। आठ समणी अधिस्नातक हैं। कुछ दो विषयों में एम.ए. हैं। कुछ समणियां स्नातकोत्तर के बाद शोधकार्य में भी रत हैं।

J.R.F. तथा NET

समणश्रेणी के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत अध्यापन कार्य भी सम्मिलित है। अध्यापन का कार्य समण/समणी वर्षों से कर रहे हैं फिर भी इसको प्रमाणित करने के लिए कुछ औपचारिकताएं पूरी करनी होती हैं। यू.जी.सी. द्वारा निर्धारित J.R.F. अथवा NET की डिग्री व्याख्याता बनने के लिए अनिवार्य है। कॉलिज और युनिवर्सिटी में अध्यापन के लिए समण श्रेणी ने इस ओर भी अपना ध्यान केन्द्रित किया। समय-समय पर आवश्यकतानुसार समणीवृन्द ने ये परीक्षाएं देकर सफलता प्राप्त की हैं। वर्तमान में सात ७ समणियां व्याख्याता बनने के लिए अपनी योग्यता पर J.R.F./NET की मुहर लगा चुकी हैं। व्यापकता प्रदान करने में एक कार्य है। पत्रि का सम्पादन—इस कार्य में भी दक्षता प्राप्ति हेतु समणियों द्वारा पत्रकारिता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाठ्यक्रम भी किया गया है।

कम्प्यूटर

बीसवीं सदी का उत्तरार्द्ध विज्ञान और तकनीकी का युग है। विज्ञान और तकनीकी का एक सफलतम प्रयोग है—कम्प्यूटर। कम्प्यूटर ने हर क्षेत्र में अपना प्रभुत्व स्थापित किया है। इसकी कार्यक्षमता समय और श्रम—दोनों के अपव्यय को बचाती है।

जैने विश्व भारती आगम सम्पादन तथा शोध के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य कर रही है। इसके पास विशाल पुस्तकालय है। जैन विश्व भारती संस्थान (विश्वविद्यालय) भी है। उसके कार्य की विशालता को देखकर एक चिन्तन सामने आया कि जै॰ वि॰ भा॰ में कम्प्यूटर व्यवस्था होनी चाहिए। तत्कालीन आचार्य तुलसी तथा युवाचार्य महाप्रज्ञ ने इस चिन्तन का मूल्यांकन किया। दृष्टि की अनुकूलता ने समणीवृन्द को इस कार्य के लिए प्रेरित किया। चार समणियों का एक दल कलकत्ता पहुंचा। उनमें से दो समणी ने दो वर्ष तक 'कम्प्यूटर पॉइन्ट' में अध्ययन कर 'डिप्लोमा' की डिग्री प्राप्त की। आज जैन विश्व भारती के अन्तर्गत साहित्य, आगम, भाष्य आदि के प्रकाशन तथा आगम 'फीडिंग' आदि कार्य समणीवृन्द के निर्देशन में सम्पादित हो रहे हैं।

भाषाओं का अध्ययन

समणश्रेणी के उदय के साथ तेरापंथ का प्रचार क्षेत्र विस्तृत हो गया। देश के दूर-दराज क्षेत्रों तथा विदेश में जैनधर्म दर्शन, प्रेक्षाध्यान, अणुव्रत, जीवन विज्ञान आदि के प्रचार की संभावना जगी। क्षेत्र के विस्तार के साथ विभिन्न भाषाओं की आवश्यकता सामने आई। चिन्तन चला। निष्कर्ष के रूप में अंग्रेजी भाषा के शिक्षण-प्रशिक्षण को प्राथमिकता दी गई। अंग्रेजी एक ऐसी भाषा है, जो भारत तथा विदेश—दोनों में समान रूप से उपयोगी सिद्ध होती है। अतः समय-समय पर समणीवृन्द का अंग्रेजी के विशेष अध्ययन हेतु जयपुर, दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, बैंगलोर आदि क्षेत्रों में जाना हुआ। वहां के श्रावकों ने उनके लिए विशेष व्यवस्थाएं कीं। महीनों तक वहां रहकर अंग्रेजी का अध्ययन किया गया। इस प्रकार विशेष अध्ययन, शिक्षण-प्रशिक्षण की व्यवस्थाएं समय-समय पर होती रहीं, होती रहती हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इससे समणश्रेणी के विकास में नई चेतना स्फुरित हुई है।

(अध्यापन)

प्राचीन शिक्षा पद्धति में अध्यापन का दायित्व धर्मगुरुओं पर होता था। गुरुकुल परम्परा चलती थी। धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की संतुलित शिक्षा दी जाती थी। विद्यार्थी वर्षों तक धर्मगुरुओं के पास रहकर शिक्षा ग्रहण करते थे। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ये सारे मानदण्ड बदल गए हैं। न धर्मगुरुओं के पास अध्यापन का कार्य रहा और न गुरुकुल परम्परा ही। शिक्षा के उद्देश्य बदले, विषय बदले, व्यवस्थाएं भी बदल गईं। न शिक्षक रहे, न शिक्षार्थी। आज दोनों के संबंधों में कोई तालमेल नहीं रहा। उस मृतप्राय संस्कृति को पुनर्जीवित करने के लिए समणश्रेणी को अध्यापन कार्य में नियोजित कियां गया।

समण श्रेणी का अध्यापन कार्य जीविका से नहीं, जीवन से जुड़ा है। केवल शिक्षा से नहीं, सृजन से जुड़ा है। समणश्रेणी शिक्षण के क्षेत्र में अपनी मुक्त सेवाएं देकर प्राचीन संस्कृति को फिर से प्रतिष्ठित करने का लघुप्रयास कर रही है। इस श्रेणी के सामने अध्यापन के तीन स्तर हैं—प्राथमिक स्कूल, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय।

प्राथमिक स्कूल

शिक्षा का प्रथम पड़ाव है—प्राथमिक शिक्षा। यह जीवन का ऐसा काल है, जिसके दौरान बालक में सुसंस्कारों का वपन किया जा सकता है। यदि प्रारम्भिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है तो आगे का मार्ग स्वतः प्रशस्त हो जाता है। विमल विद्या विहार (तुलसीग्राम, जैनविश्व भारती, लाडनूं) एस.टी.बी.ए. (गंगाशहर), स्टील प्लान्ट, (बोकारो) की स्कूलें आदि ऐसे शिक्षण संस्थान हैं, जहां बालकों को पाठ्यक्रम के साथ-साथ जीवन विज्ञान का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। समण/समणीवृन्द समय-समय पर इन स्कूलों में पहुंचते हैं। विधार्थियों को प्रशिक्षण देते हैं। अच्छा जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। जीवन विज्ञान के निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्यापन भी करवाते हैं।

महाविद्यालय

राजस्थान में जैन दर्शन, जीवन विज्ञान का पाठ्यक्रम कॉलेज स्तर पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी चलता है। राणावास, पाली, गंगापुर आदि इसके मुख्य केन्द्र हैं। ये महाविद्यालय प्रतिवर्ष एक निश्चित समय के लिए समण/समणीवृन्द को आमंत्रित करते हैं। जैन दर्शन तथा जीवन विज्ञान विषय के अधिकृत समण/समणी वहां जाकर अपनी सेवाएं देते हैं।

पारमार्थिक शिक्षण संस्था के अन्तर्गत ब्राह्मीविद्यापीठ में स्नातक (बी.ए.) तक का पाठयक्रम चलता है। ब्राह्मीविद्यापीठ मुमुक्षु बहिनों का शिक्षण संस्थान है। उस कॉलेज में समणीवृन्द वर्षों से अध्यापन कार्य कर रहा है। जैन-विद्या, जैन-दर्शन, प्राकृतव्याकरण और साहित्य, संस्कृत व्याकरण, संस्कृत-साहित्य, जीवन विज्ञान आदि विषयों के अध्यापन का दायित्व समणश्रेणी पर है।

विश्वविद्यालय

समणी वर्ग जहां विद्यालयों, महाविद्यालयों में अध्यापन रत हैं, वहां विश्वविद्यालय को भी वे अपनी सेवाएं दे रही हैं। वर्तमान में जैन विश्वभारती संस्थान मान्य विश्व विद्यालय में चार विभाग है—जैनदर्शन और तुलनात्मक दर्शन, प्राकृत-भाषा और साहित्य, अहिंसा-शांति एवं अणुव्रत तथा जीवन विज्ञान। प्रयेत्क विभाग में दो-दो समणी व्याख्याता के रूप में अध्यापन कार्य करती हैं।

अध्यापन चाहे प्राथमिक स्कूलों में हो, कॉलेज अथवा युनिवर्सिटी में हो, लाडनूं में हो अथवा कहीं अन्यत्र, सर्वत्र निःशुल्क किया जाता है। क्योंकि शुल्क का प्रश्न वहां उठता है, जहां शिक्षा आजीविका के साथ जुडी होती है। यहां अध्यापन कार्य आत्मधर्म समझ कर किया जाता है।

प्रौढ शिक्षा

भारत सरकार द्वारा लाडनूं तहसील को साक्षर बनाने का कार्य जैन विश्व भारती को दिया गया। उस अभियान के अन्तर्गत समणीवृन्द ने सम्पूर्ण लाडनूं तहसील के अन्तर्गत आने वाले गांवों का दौरा किया। एक-एक व्यक्ति से सम्पर्क कर, उन्हें शिक्षित (साक्षरता) होने के लिए तैयार किया तथा रात्रिकालीन कार्यक्रम आयोजित कर शिक्षा की उपयोगिता के साथ-साथ व्यसन मुक्ति, आहार शुद्धि तथा कुरुढ़ियों से मुक्त बनाने के लिए प्रेरित किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साहित्य-सम्पादन

आगम सम्पादन तथा साहित्य सृजन की दृष्टि से तेरापंथ सम्पूर्ण जैन जगत् में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। तेरापंथ द्वारा सम्पादित आगमग्रंथ, कोश, भाष्य, निर्युक्तियों आदि की प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध है। तेरापंथ साहित्य की अपनी मौलिकता है। साहित्य सम्पादन के कार्य में आगम शब्द कोश आदि महत्त्वपूर्ण कार्यों के सम्पादन में समणीवृन्द सहभागी बने हैं। निर्युक्तियों, व्यवहारभाष्य, निशीथभाष्य आदि के सम्पादन के दुरूह कार्य में भी इस श्रेणी की विशेष भूमिका रही है।

समणश्रेणी द्वारा संकलन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं। आचार्य तुलसी की अपार साहित्य सम्पदा से संकलित सूक्ति ग्रंथ—एक बूंदः एक सागर पांच भागों में प्रकाशित है। इसे विश्व का सबसे वृहत् सूक्ति संग्रह कहा जा सकता है। आचार्य तुलसी साहित्य : एक पर्यवेक्षण, आचार्य तुलसी साहित्य सम्पदा, पौरुष की जलती मशाल इस श्रेणी की अपनी कृतियां हैं। आचार्य महाप्रज्ञ की तीन महत्त्वपूर्ण कृतियां-अमूर्त्त चिन्तन, चित्त और मन तथा संभव है समाधान समणश्रेणी द्वारा संकलित है। लगभग पचास से अधिक लघुशोध प्रबन्ध समणीवृन्द द्वारा लिखे जा चुके हैं। अनेक हस्तलिखित पत्रिकाएं, गीत संग्रह, काव्य संग्रह, कहानी संग्रह,निबंध संग्रह भी गणाधिपति गुरुदेव के चरणों में समर्पित किये जा चुके हैं।

विकास की इतिश्री यहीं नहीं है। बहुत बड़ा क्षेत्र सामने पड़ा है। विकास की यात्रा अभी तलहटी में ही है, ऊंचाई तो बहुत दूर है। कहा जा सकता है कि गणाधिपति गुरुदेव एवं आचार्यश्री की अनन्त प्रेरणा से तथा महाश्रमणी जी के वात्सल्य भरे प्रोत्साहन से समणश्रेणी शिक्षा, सम्पादन और लेखन के क्षेत्र में विकास कर रही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यात्रा

जैन मुनि की चर्या का एक महत्त्वपूर्ण अंग है—यात्रा। हजारों-हजारों किलोमीटर की पैदल यात्रा करते हुए साधु-साध्वी ढाणी-ढाणी, गांव-गांव, शहर-शहर पहुंचकर इन्सान को अच्छा जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। अपने उपदेशों, आख्यानों, आन्दोलनों, अभियानों के माध्यम से जन-चेतना में नैतिक जाग्रति पैदा करते हैं। वर्ष भर में मात्र चार महीनें (चातुर्मास) एक स्थान में रहते हैं, शेष आठ महीनें घूम-घूमकर जनता को सन्मार्ग दिखाने का प्रयत्न करते हैं। पैदल यात्रा के दौरान अनेक कठिनाइयां सामने आती हैं। मौसम की प्रतिकूलता, पथ की बीहड़ता, आहार-पानी, आवास/स्थान की कठिनाइयों के बावजूद साधु-साध्वियां झरने के जल की तरह निरन्तर गतिशील रहते हैं।

समणश्रेणी जैनमुनि का एक अधुनातन रूप है। गणाधिपति गुरुदेव के शब्दों में—समणश्रेणी आधुनिक युग का संन्यास है। इस श्रेणी के लिए पदयात्रा की अनिवार्यता नहीं है। पदयात्रा की कठिनाइयों तथा क्षेत्रीय दूरी को शीघ्र तय करने के लिए वैज्ञानिक संसाधनों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए इन्हें वाहन के प्रयोग का विकल्प दिया गया। समण-समणी आवश्यकतानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए वाहन का प्रयोग कर सकते हैं। वाहन से यात्रा करने के कुछ लाभ स्पष्ट हैं—

- साधु-साध्वी को पैदल चलकर जिस दूरी को तय करने में महीने-महीने लग जाते हैं। वह दूरी समण/समणी द्वारा दो-तीन दिनों या कुछ ही घंटों में तय कर ली जाती है।
- भारत में कई ऐसे क्षेत्र हैं, जहां साधु-साध्वियों का जाना कठिनतम है। ऐसे स्थानों पर समण/समणी आसानी से पहुंच सकते हैं।
- कई बार ऐसी राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठियां, सम्मेलन आदि होते हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिसमें सभी धर्मों के संन्यासी आमंत्रित होते हैं। जैनमुनि तत्काल वहां पहुंच नहीं सकते। उस स्थिति में समणश्रेणी का उपयोग सहजरूप से हुआ है एवं हो सकता है।

- देश भर में बिखरे दो-दो, चार-चार तेरापंथ परिवारों की संभाल साधु-साध्वियों के लिए एक दुरूह कार्य है पर समणश्रेणी आसानी से इसे सम्पादित कर सकती हैं।
- विदेशों में हजारों-लाखों भारतीय जैन लोग प्रवासित हैं। अनेक विदेशी व्यक्ति भी जैनधर्म-दर्शन, जैन साधुओं की जीवन-शैली को जानने तथा सुखी जीवन के सूत्रों की खोज में लगे हुए हैं। साधु-साध्वियां अपने स्वीकृत नियमों की सीमा में रहते हुए विदेश नहीं जा सकते। इस दिशा में समण-श्रेणी की उपयोगिता स्वतः सिद्ध है। समण-समणी महावीर के सिद्धान्तों के प्रति प्रवासित भारतीय जैन लोगों की आस्था के स्थिरीकरण में तथा वहां के मूल निवासियों को जैनधर्म तथा जीने की कला का बोध देने के लिए विदेश की धरती पर जा सकते हैं।

सही निर्णय

समणश्रेणी का प्रारम्भ हुआ उसके कुछ समय पश्चात् ही नेपाल की धरती पर विश्व हिन्दू सम्मेलन का विराट् आयोजन होने वाला था। उस सम्मेलन में सभी धर्मों के संन्यासी ही आमंत्रित थे। इस सम्मेलन में अपनी पावन उपस्थिति देने के लिए गणाधिपति तुलसी को भी आमंत्रित किया गया। मुनिचर्या के स्वीकृत नियमों के कारण वे वहां पहुंच नहीं सकते थे। अतः समणियों को भेजने का निर्णय लिया गया। गुरुदेव तुलसी के प्रतिनिधि के रूप में समणीवृन्द ने वहां एक प्रशंस्य भूमिका निभाई। यह अवसर समण श्रेणी की स्थापना के औचित्य को उजागर करने का सुनहरा दिन बना।

समण-समणी को जैनमुनि तथा गुरुदेव तुलसी के प्रतिनिधि के रूप में देश-विदेश में जाने का अवसर मिलता रहा है।

यात्रा का उद्देश्य

समणश्रेणी की यात्रा का उद्देश्य न राजनीति के साथ जुड़ा है और न किसी भौतिक, आर्थिक लाभ के साथ ही। इसका विशुद्ध उद्देश्य है—जैनधर्म, अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन-विज्ञान को जन-जन तक पहुंचाना तथा तेरापंथी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रावक समाज व जैन समाज की प्रतिलेखना करना।

बीसवीं सदी अणुअस्त्रों, विश्वयुद्धों, तनावों, आत्महत्याओं और चैतसिक विक्षिप्तताओं की सदी रही है। महावीर द्वारा दिए गए—अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकान्त के सिद्धान्तों में विश्व की इन सब समस्याओं का समाधान निहित है पर आज ये सिद्धान्त केवल कर्णप्रिय रह गए हैं। जीवन-व्यवहार से इनका कोई संबंध नहीं रह गया है। गणाधिपति तुलसी ने इन सिद्धान्तों को जीवनगत बनाने की दृष्टि से अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवनविज्ञान—ये तीन अभियान चलाए। समण-समणीवृन्द देश-विदेश की यात्राएं कर, जन-जन को इनसे परिचित कराने का प्रयत्न कर रहा है।

तेरापंथी श्रावक समाज पूरे भारत में—महानगरों से लेकर छोटे-छोटे गांवों तक फैला हुआ है। इन सब स्थानों पर साधु-साध्वी जा नहीं सकते। लम्बे समय तक यदि वहां बसने वाले श्रावकों की संभाल न की जाए तो वे अपने संस्कार सुरक्षित नहीं रख पाते। ऐसे स्थानों पर समण-समणी सहजतया पहुंच जाते हैं।

क्षेत्रीय विस्तार

सन् १९९०, योगक्षेम वर्ष के पश्चात् समणश्रेणी में लम्बी यात्राएं प्रारम्भ हुईं। इससे पूर्व यात्राओं का कोई व्यवस्थित क्रम नहीं था। पर्युषण पर्व के अवसर पर जहां-जहां चातुर्मास नहीं होता, समणीजी के वर्ग जाते। वे एक, दो महीने की यात्रा कर लौट आते। इसी प्रकार शिविर आदि अन्य कोई प्रसंग आता, यात्राएं होतीं। पर यात्राओं का व्यवस्थित रूप योगक्षेम वर्ष के बाद से प्रारम्भ हुआ। विगत सात वर्षों से समण-समणी के वर्ग क्षेत्रीय यात्राओं पर जाते हैं। छह/सात/दस महीने का समय वहां बिताते हैं। उस क्षेत्र के गांवों-शहरों में बसे श्रावक समाज की संभाल करते हैं और क्षेत्रीय रिपोर्ट पूज्य गुरुदेव व आचार्य प्रवर के श्री चरणों में प्रस्तुत करते हैं। अब तक इस श्रेणी के द्वारा भारत के अनेक राज्यों की यात्राएं हो चुकी हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजस्थान	आंध्रप्रदेश
गुजरात	तमिलनाडू
महाराष्ट्र	कर्णाटक
दिल्ली	उड़ीसा
हरियाणा	मणिपुर
पंजाब	मेघालय
मध्यप्रदेश	मिजोरम
उत्तरप्रदेश	नागालैण्ड
आसाम	अरुणाचल
बंगाल	केरल
बिहार	जम्मू-कश्मीर, हिमाचल,गोवा आदि

सन् १९८३ में समणश्रेणी की विदेश यात्रा व्यवस्थित रूप से प्रारम्भ हुई। तब से लेकर अब तक प्रत्येक वर्ष दो या तीन वर्ग विदेश जाते हैं। आज तक नेपाल, भूटान सहित विश्व के अनेकों देशों की यात्रा हो चुकी है–

इंग्लैड	इंडोनेशिया
इटली	इज्रायल
हॉलैंड	नीदरलैंड
बेल्जियम	स्वीडन
स्वीट्जरलैण्ड	मलेशिया
सिंगापुर	रूस
हांगकांग	आस्ट्रिया
हंगरी	कनाडा
जर्मनी	अमेरिका
जापान	ऑस्ट्रेलिया
ताइवान	अफ्रीका
चीन	नेपाल
बैंकाक	भूटान, माल्टा, मैक्सिको आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभिन्न कार्यक्रम

यात्राओं में होने वाले कार्यक्रम दो स्तरों पर आयोजित किये जाते हैं— सार्वजनिक और संघीय।

सार्वजनिक

प्रेक्षाध्यान एक ऐसा उपक्रम है, जिसमें आम आदमी को अपनी समस्या का समाधान दृष्टिगत होता है। संतुलित व्यक्तित्व-विकास के लिए प्रेक्षाध्यान अनिवार्य तत्त्व है। यह साम्प्रदायिक घेरों से ऊपर है। यात्राओं के दौरान शिविरों के माध्यम से प्रेक्षाध्यान का सैद्धान्तिक और प्रायोगिक रूप प्रस्तुत किया जाता है। न केवल तेरापंथी, न केवल जैन, बल्कि इतर जैन भी इन शिविरों में बड़े ही उत्साह से भाग लेते हैं। यह समाज के हर वर्ग के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। प्रेक्षाध्यान शिविरों के अतिरिक्त स्कूलों, कॉलेजों विश्वविद्यालयों में अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन-विज्ञान तथा जैनदर्शन के मौलिक सिद्धान्तों के विषय में प्रवचन, कान्फ्रेन्स, प्रेस कॉन्फ्रेंस आदि कार्यक्रम रखे जाते हैं। आज तक लगभग ३०० से अधिक प्रेक्षाध्यान शिविर समण-समणीवृन्द के निर्देशन में सम्पन्न किये जा चुके हैं। वे करीबन ५० नेशनल और इन्टरनेशनल कॉन्फ्रेंस में भाग ले चुके हैं तथा ५० से अधिक प्रेस कॉन्फ्रेंस को संबोधित कर चुके हैं। इस वर्ग के द्वारा सैंकड़ों-सैंकड़ों, स्कूल-कॉलेज में विभिन्न कार्यक्रम रखे जा चुके हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से देश के हजारों-हजारों शिक्षक लाखों-लाखों विद्यार्थी गणाधिपति तुलसी के मिशन से प्रभावित हुए हैं। विदेशों में भी कई स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों में समण-समणीवृन्द के कार्यक्रम प्रस्तुत होते रहते हैं। हवाई, आरिजोना, स्टेन्फोर्ड, आक्सफोर्ड, केम्ब्रिज, शिल्यकोन, बुद्धिस्ट बर्कले, सिडनी आदि अनेक विदेशी विश्वविद्यालयों में प्रभावशाली कार्यक्रम आयोजित हो चुके हैं।

संघीय कार्यक्रम

जिस क्षेत्र में समण-समणी जाते हैं, वहां के श्रावकों की सार-सम्भाल करना उनका प्रथम दायित्व होता है। सुदूर प्रान्तों में रहने वाले लोग भी केन्द्र से जुड़े रहें, युवापीढ़ी तथा बालकों में धार्मिक संस्कार पल्लवित होते रहें, महिलाओं में धर्म के गहरे संस्कार हों ताकि वे पूरे परिवार में अच्छे संस्कारों का संचरण कर सकें। इसके लिए श्रावक सम्मेलन, पारिवारिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संगोष्ठियां, महिला सम्मेलन, ज्ञानशाला आदि के संचालन से उनमें जागृति पैदा करते हैं तथा ऐसे विषयों पर प्रवचन करते हैं, जिनके माध्यम से संघ के प्रति उनको अपने दायित्व का बोध हो सके। समणश्रेणी की ये यात्राएं संघीय प्रभावना तथा संस्कार-निर्माण में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

पैदल यात्रा

यात्रा के लिए वाहन का प्रयोग समणश्रेणी के लिए एक वैकल्पिक विधान है। समण-समणी केवल वाहन में ही यात्रा करते हों ऐसी बात नहीं, पैदल यात्रा के प्रसंग भी बनते रहते हैं। ये यात्राएं पूज्यगुरुदेव के साथ की जाती हैं तब इन यात्राओं के दौरान समणीवृन्द के द्वारा अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान आदि मिशन को लेकर मार्गवर्ती विद्यालयों और महाविद्यालयों में कार्यक्रम रखे जाते। गणाधिपति तुलसी के विराट् व्यक्तित्व से जन-जन को परिचित कराया जाता है। गांव-गांव में घर-घर जाकर लोगों को व्यसनमुक्त जीवन जीने की प्रेरणा दी जाती। ये पैदल यात्राएं जहां संघीय दृष्टि से लाभप्रद होती हैं, वहां श्रेणी के विकास में भी सहयोगी बनती हैं।

केवल गुरुसन्निधि में ही नहीं, स्वतंत्र रूप से भी पैदल यात्राओं के प्रयोग इस श्रेणी में किये गए हैं।

ऐतिहासिक अमृत कलश यात्रा

गुरुदेव तुलसी के क्रांतिकारी नेतृत्व के पचास वर्ष। उन पांच दशकों की कहानी कहने वाला अमृत महोत्सव। २८ अप्रेल१९९५ का दिन। पचास दिवसीय अमृत कलश पदयात्रा के साथ इस महोत्सव का शुभारम्भ।

ऐतिहासिक भूमि मेवाड़ के गंगापुर कस्बे में मुनि तुलसी को आचार्यपद प्रदान किया गया। बाईस वर्ष का एक तरुण तेजस्विता को अपने में समाए सन् १९३५ को तेरापंथ के नौंवें सिहांसन पर अधिष्ठित हुआ। सफलतम शासनकाल के पचास वर्षों की पूर्णाहुति के उपलक्ष में इस अमृत-कलश पदयात्रा के लिए मेवाड़ का चयन किया गया। बीता हुआ कल एक बार पुनः जीवित हो उठा।

अमृत-कलश पदयात्रा की शुरुवात के पहले दिन इस अभियान का उद्घाटन-समारोह रखा गया। इस समारोह में इस यात्रा का उद्देश्य तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपरेखा प्रस्तुत की गई। पैदल चलने वाले यात्रियों को दिशानिर्देश दिए गए। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि बने—राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री हरदेव जोशी।

इस ऐतिहासिक पदयात्रा का नेतृत्व समणीवृन्द ने किया। सात चरणों में विभक्त इस यात्रा ने लगभग ५९० किलोमीटर की दूरी तय की। भीलवाड़ा व उदयपुर जिले के ७६ गांवों तथा शहरों का स्पर्श किया। इस पदयात्रा के पांच उद्देश्य थे—

१. मद्य-निषेध
२. मिलावट निरोध
३. दहेज-उन्मूलन
४. अस्पृश्यता-निवारण
५. भावात्मक एकता

इस पदयात्रा के दौरान ३५४६६ संकल्प-पत्र भरे गए। संकल्प-पत्र भरने का अर्थ है ३५४६६ व्यक्तियों ने उपर्युक्त संकल्प ग्रहण किये। यह ऐतिहासिक अमृत कलश पदयात्रा समणश्रेणी की कार्यक्षमता उजागर करने में योगभूत बनीं तथा अनेकानेक कार्यकर्त्ताओं की कार्यशैली का परिचय हुआ।

सेवा संस्कार यात्रा

जय तुलसी फाउण्डेशन द्वारा संचालित 'सेवा संस्कार यात्रा' में भी इस श्रेणी की उपयोगिता साबित हुई है। अब तक महाराष्ट्र व मालवा प्रदेश के एक सौ चालीस गावं-शहर, जोधपुर संभाग के इकतीस तथा हरियाणा के पैंतालीस गांवों-शहरों का दौरा ३१, ३१ व १७ दिनों में सम्पन्न किया गया है। यह यात्रा आगे भी जारी है। इसमें संस्कार-निर्माण का महत्त्वपूर्ण कार्य किया जाता है।

समण श्रेणी अपनी उम्र के सोलह बसन्त पार कर चुकी है। इसके उद्भव के साथ उठी आशंकाए, आलोचनाएं, कपोल-कल्पनाएं सब कुछ अब समाहित हो चुकी हैं। इसकी सफलताओं ने समाज के सामने इसकी उपयोगिता को उजागर किया है। समणश्रेणी की उपयोगिता किसी व्यक्ति-विशेष से जुड़ी हुई नहीं हैं, यह तो तेरापंथ-संघ व इसके आचार्यों के व्यक्तित्व का विस्तार है, जिसके हर कोणसे मानवता उपकृत हुई है और सदियों तक होती रहेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'समर्पण-शब्दावलि'

वन्दे आचार्यवरं हाथ जोड़ अर्ज करूं मैं एवं सहवर्ती सभी समणीजी श्री चरणों में उपस्थित हैं। जहां नियोजित करें वहां सहर्ष रहने का भाव है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकल्प-पत्र

मैं श्रमण भगवान् महावीर तथा उनके निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा, प्रतीति और रुचि व्यक्त करता/करती हूं तथा सविनय बद्धाञ्जलि यह संकल्प स्वीकार करता/करती हूं कि श्री भिक्षु, भारीमाल आदि पूर्वज आचार्य, शासन नियन्ता गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी तथा वर्तमान आचार्य श्री महाप्रज्ञ द्वारा प्रदत्त अनुशासन मुझे मान्य है।

गुरुदेव! आप संघ के प्राण हैं, श्रमण-परम्परा के अधिनेता हैं, आप पर मुझे पूर्ण श्रद्धा है।

१. मैं आपके अनुशासन का अतिक्रमण नहीं करूंगा/करूंगी

२. मैं अपने/अपनी नियोजक/नियोजिका के अनुशासन का भी अतिक्रमण नहीं करूंगा/करूंगी।

३. मैं समण-श्रेणी के सामायिक का आत्म-साक्षी से अनुशीलन करूंगा/करूंगी।

४. मैं मुनि संघ के प्रति पूर्ण निष्ठावान् तथा विनम्र रहूंगा/रहूंगी।

५. मैं समण-श्रेणी में दीक्षित सभी समण-समणियों के प्रति सम बरताव करूंगा/करुंगी। किसी को अपना बनाने का प्रयत्न नहीं करूंगा/करूंगी।

६. मैं अपने से बड़ों के प्रति विनम्र रहूंगा/रहूंगी तथा छोटों के प्रति उदार रहूंगा/रहूंगी।

७. मैं प्रवास और यात्रा में आपकी दृष्टि का अनुसरण करूंगा/करूंगी।

८. मैं अपनी इच्छा से किसी को समण-श्रेणी में सम्मिलित नहीं करूंगा/करूंगी।

९. मैं किसी भी साधर्मिक की उतरती बात नहीं करूंगा/करूंगी।

१०. किसी में दोष जान पड़ेगा तो मैं उसे या सम्बद्ध अधिकारी को बताऊंगा/बताऊंगी। अन्यत्र उसकी चर्चा नहीं करूंगा/करूंगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. मैं किसी भी विवादास्पद विषय में आप या आप द्वारा निर्दिष्ट व्यक्ति के निर्णय को सहजता से स्वीकार करूंगा/करूंगी।

यह संकल्प पत्र मैंने श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया है, संकोच, आवेश या प्रभाववश नहीं।

स्वीकर्त्ता/स्वीकर्त्री
समण/समणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समण-प्रतिक्रमण

–इरियावहिय सुत्तं–

इच्छामि पडिक्कमिउं इरियावहियाए विराहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे ओसा-उत्तिंग, पणग-दगमट्टी , मक्कडा-संताणा-संकमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया अभिहया वत्तिया लेसिया संघाइया संघट्टिया परियाविया किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

–काउस्सग्गपइण्णा-सुत्तं–

तस्स उत्तरीकरणेणं पायच्छित्तकरणेणं विसोहीकरणेणं विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं जंभाइएणं उड्डुएणं वायनिसग्गेणं भमलीए पित्तमुच्छाए सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ होज्ज मे काउस्सग्गो जाव अरहंताणं भगवंताणं नमोक्कारेणं न पारेमि ताव कायं[1] ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

–चउवीसत्थव-सुत्तं–

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्मतित्थयरे जिणे।
अरहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली॥१॥

उसभमजियं च वंदे, संभवमभिनंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥२॥

---

१. ध्यान प्रारम्भ करें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल सिज्जंस वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि॥३॥

कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च॥४॥

एवं मए अभिथुआ, विहुयरयमला पहीण-जरमरणा।
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥५॥

कित्तिय वंदिय मए, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरोग्ग-बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु॥६॥

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु॥७॥

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।

(ध्यान समाप्त)

–चउवीसत्थव-सुत्तं–

लोगस्स उज्जोयगरे.....का पाठ प्रकट में कहें।

–सक्कत्थुई–

नमोत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थयराणं सहसंबुद्धाणं पुरिसोत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरीयाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं जीवदयाणं धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंत-चक्कवट्टीणं दीवो ताणं सरण-गई-पइट्ठा अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं विअट्टछउमाणं जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं सव्वण्णूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुयमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्तयं सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं णमो जिणाणं जियभयाणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

–प्रतिक्रमण प्रारम्भ–

मत्थएण वंदामि प्रथम 'सामायिक' आवश्यक की आज्ञा।

–आवस्सई-सुत्तं–

आवस्सई इच्छाकारेण संदिसह भयवं देवसियं[1] पडिक्कमणं ठाएमि देवसिय-णाण-दंसण-चरित्त-विसोहणट्ठं करेमि आवस्सयं।

(नमुक्कार-सुत्तं का पाठ पढ़ें)

(मंगलसुत्तं का पाठ कहें)

करेमि भंते! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि–

उवसंपज्जामि णं चउव्विहं समण-धम्मं–खंतिं, मद्दवं, अज्जवं, लाघवं।

वज्जयामि णं चउव्विहं अज्झत्थ-दोसं–कोहं, माणं, मायं, लोहं।

उवसंपज्जामि णं पंचविहं समण-वेरमणं–पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं।

उवसंपज्जामि णं तिविहं समण-अणुसासणं–मण-अणुसासणं, वय-अणुसासणं, काय-अणुसासणं।

उवसंपज्जामि णं समण-सीलं–सांतं सहवासं।

वज्जयामि णं चउव्विहं पावं–कलहं, अब्भक्खाणं, पेसुण्णं, परपरिवादं।

उवसंपज्जामि णं पंचविहं समण-विवेगं–गमण-विवेगं, भासा-विवेगं, भोयण-विवेगं, उवगरण-विवेगं, उस्सग्ग-विवेगं।

उवसंपज्जामि णं चउव्विहं समण-साहणं–सज्झायं, झाणं, अणुप्पेहं, ठाणं।

उवसंपज्जामि णं सुय-सामाइयं–

काले विणये बहुमाणे, उवहाणे तहा अणिण्हवणे।
वंजण-अत्थ-तदुभये, अट्ठविहो णाणमायारो॥

उवसंपज्जामि णं दंसण-सामाइयं–

---

१. रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में 'देवसिय' शब्द के स्थान पर राइय, देवसिय, पक्खिय, देवसियचउमासिय-पक्खिय, देवसियसंवच्छरिय ऐसा कहें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निस्संकिय, निक्कंखिय, निव्वितिगिच्छा अमूढदिट्ठी य।
उववूह थिरीकरणे, वच्छल्ल-पभावणे अट्ठ॥

जावज्जीवं एयं सव्वं उवसंपज्जामि अप्पसक्खियं गुरुसक्खियं। अइक्कमणं न करेमि, न कारवेमि, करंतं पि अण्णं न समणुजाणामि। तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

द्वितीय आवश्यक

'मत्थएण वंदामि' द्वितीय चउवीसत्थव आवश्यक की आज्ञा।

–चउवीसत्थव-सुत्तं–

लोगस्स उज्जोयगरे.....का पाठ कहें–

तृतीय आवश्यक

'मत्थएण वंदामि' तृतीयवंदना आवश्यक की आज्ञा।

–वंदणय-सुत्तं–

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं, जावणिज्जाए निसीहियाए। अणुजाणह मे मिउग्गहं। निसीहि[1] अहोकायं काय-संफासं। खमणिज्जो भे किलामो। अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो? जत्ता भे जवणिज्जं च भे खामेमि खमासमणो! देवसियं वइक्कमं आवस्सियाए[2] पडिक्कमामि खमासमणाणं देवसियाए आसायणाए तित्तीसन्नयराए जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए वयदुक्कडाए कायदुक्कडाए कोहाए माणाए मायाए लोभाए सव्वकालियाए सव्वमिच्छोवयाराए सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स खमासमणो! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

– वंदणय-सुत्तं –

इच्छामि खमासमणो!.....का पाठ दो बार कहें।

---

१. 'निसीहि' कहकर पंजों के बल बैठकर आगे का पाठ कहें
२. आवस्सियाए के बाद खड़े हो जायें
नोट–दूसरी बार 'खमासमणो' की पाटी में 'निसीहि' के बाद बैठकर ही संपूर्ण पाठ कहें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थ प्रतिक्रमण आवश्यक

मत्थएण वंदामि चतुर्थ 'प्रतिक्रमण' आवश्यक की आज्ञा[1]

–इरियावहियं-सुत्तं–

इच्छामि पडिक्कमिउं इरियावहियाए·····का पाठ कहें।

–अतिचार–

क्षमा धर्म के अतिचार–

* प्रिय-अप्रिय परिस्थिति में सहिष्णुता न रखी हो।
* अनुशासन किये जाने पर असहिष्णुता का भाव आया हो।
* अश्रुपात किया हो।

तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

मार्दव धर्म के अतिचार–

* अपने से बड़ों की अवज्ञा या आशातना की हो।
* छोटों के प्रति वात्सल्य भाव न रखा हो।
* अपने आपको उत्कृष्ट दिखाने का प्रयत्न किया हो।
* व्यवहार में कठोरता बरती हो, अपशब्दों का प्रयोग किया हो।

तस्स·····

आर्जव धर्म के अर्तिचार–

* कायिक, वाचिक मानसिक प्रवंचना की हो।
* अपनी भूल को छिपाने का प्रयत्न किया हो।

तस्स···

लाघव धर्म के अतिचार–

* मर्यादा से अतिरिक्त उपकरणों का प्रयोग किया हो।

तस्स·····

अहिंसाव्रत के अतिचार–

* षड्जीवनिकाय के प्रति आत्मतुला का भाव न रहा हो।
* हिंसा का विकल्प आया हो।
* अनिष्ट चिंतन, प्रतिशोध, उत्तेजना रूप मानसिक हिंसा की हो।

तस्स···

---

१. इरियावहियं सुत्त तथा आगे का प्रतिक्रमण (दाएं घुटने को खड़ा रख कर) बैठकर करें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्यव्रत के अतिचार–

* क्रोध, लोभ, भय या हास्यवश असत्य बोलने का विकल्प आया हो।
* यथार्थ को छिपाने का प्रयत्न किया हो।
* कथनी और करनी में समानता न रखी हो।

तस्स···

अचौर्यव्रत के अतिचार–

* आचार और व्यवहार में प्रामाणिकता का अतिक्रमण किया हो।
* बिना अनुमति दूसरों की वस्तु का उपयोग किया हो।
* मर्यादा, व्यवस्था, अनुशासन का अतिक्रमण किया हो।

तस्स···

ब्रह्मचर्यव्रत के अतिचार–

* ब्रह्मचर्य के उपायों आहर-संयम, इन्द्रिय-संयम, आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि का अभ्यास न किया हो।
* वासना को उत्तेजित करने वाली कथा, साहित्य, चित्र, संगीत आदि में रस लिया हो।
* ब्रह्मचर्य की निरर्थकता या अनावश्यकता का विकल्प आया हो।

तस्स···

अपरिग्रह व्रत के अतिचार–

* बहुमूल्य व आकर्षक उपकरण लेने का भाव आया हो।
* शारीरिक विभूषा का भाव आया हो अथवा विभूषा की हो।
* इन्द्रिय विषयों के प्रति मूर्च्छा का भाव आया हो।

तस्स···

मन-अनुशासन के अतिचार–

* मन को स्थिर करने का अभ्यास न किया हो।
* भावक्रिया का अभ्यास न किया हो।
* प्रिय-अप्रिय घटना के प्रति प्रतिक्रिया की हो।
* अनित्य, अशरण, एकत्व, अन्यत्व आदि अनुप्रेक्षा का अभ्यास न किया हो।

तस्स···

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वचन-अनुशासन के अतिचार–

* मौन का अभ्यास न किया हो।
* मितभाषिता का अभ्यास न किया हो।
* वाणी की प्रवृत्ति में संयम न बरता हो।

तस्स···

काय-अनुशासन के अतिचार–

* कायोत्सर्ग का अभ्यास न किया हो।
* आसन आदि के द्वारा शरीर को न साधा हो।
* काया की प्रवृत्ति में संयम न बरता हो।

तस्स···

शांत-सहवास के अतिचार–

* उपशान्त कलह की उदीरणा की हो।
* अपनी भूल को दूसरों पर थोपने का प्रयत्न किया हो।
* किसी के प्रमाद की यत्र-तत्र चर्चा की हो।
* बहुत लम्बे समय के बाद किसी का दोष जताया हो।
* आक्षेपात्मक आलोचना की हो।

तस्स···

गमन-विवेक के अतिचार–

* अनावश्यक गमन किया हो।
* चलते समय भावक्रिया का अभ्यास न किया हो।

तस्स···

भाषा-विवेक के अतिचार–

* कटु शब्दों का प्रयोग किया हो,
* वाणी मे मधुरता का अभ्यास न किया हो।

तस्स···

आहार-विवेक के अतिचार–

* असंतुलित आहार किया हो।
* ऊनोदरी का अभ्यास न किया हो।
* गरिष्ठ भोजन या अन्य किसी वस्तु के प्रति आकर्षण का भाव आया हो।

तस्स···

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपकरण-विवेक के अतिचार–

* उपकरणों के प्रयोग में सावधानी न बरती हो।

तस्स···

उत्सर्ग-विवेक के अतिचार–

* उत्सर्ग के वेग को धारण किया हो।
* उत्सर्ग के उपयुक्त स्थान की गवेषणा न की हो।
* स्वच्छता का ध्यान न रखा हो।

तस्स···

आगमे तिविहे पन्नत्ते, तं जहा–सुत्तागमे, अत्थागमे, तदुभयागमे एअस्स सिरि-णाणस्स जो मे देवसिओ अइयारो कओ तं आलोएमि।

जं वाइद्धं, वच्चामेलियं, हीणक्खरं, अच्चक्खरं, पयहीणं, विणयहीणं, घोसहीणं, जोगहीणं, सुट्ठुदिण्णं दुट्ठुपडिच्छियं, अकाले कओ सज्झाओ, काले न कओ सज्झाओ, असज्झाइए सज्झाइयं, सज्झाइए न सज्झाइयं, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

श्रुत सामायिक के अतिचार–

* उच्चारण में मात्रा, वर्ण या पद का विपर्यय या मिश्रण किया हो।
* उच्चारण में मात्रा, वर्ण या पद की न्यूनाधिकता की हो।
* स्वाध्याय-काल में स्वाध्याय न किया हो, अस्वाध्याय में स्वाध्याय किया हो।
* उच्चारण में अति त्वरा या विलम्ब किया हो।

तस्स···

दर्शन-सामायिक के अतिचार–

अरहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इय सम्मत्तं मए गहियं॥

एअस्स पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा–संका कंखा वितिगिच्छा परपासंडपसंसा परपासंडसंथव जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

* साध्य, साधन और साधना के प्रति शंका, कांक्षा, विचिकित्सा की हो।
* विपरीत दिशागामी व्यक्ति या विचार का समर्थन या परिचय किया हो।

तस्स···

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निग्गंथपावयणे थिरीकरण-सुत्तं

नमो चउवीसाए तित्थयराणं उसभाइमहावीरपज्जवसाणाणं इणमेव निग्गंथं पावयणं सच्चं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं नेआउयं संसुद्धं सल्लगत्तणं सिद्धिमग्गं मुत्तिमग्गं निज्जाणमग्गं निव्वाणमग्गं अवितहमविसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गं। एत्थं ठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिनिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

तं धम्मं सद्दहामि पत्तियामि रोएमि फासेमि पालेमि अणुपालेमि। तं धम्मं सद्दहंतो पत्तियंतो रोएंतो फासंतो पालंतो अणुपालंतो तस्स धम्मस्स केवलिपण्णत्तस्स[1] अब्भुट्ठिओमि आराहणाए विरओमि विराहणाए–

असंजमं परियाणामि, संजमं उवसंपज्जामि।
अबंभं परियाणामि, बंभं उवसंपज्जामि।
अकप्पं परियाणामि, कप्पं उवसंपज्जामि।
अन्नाणं परियाणामि, नाणं उवसंपज्जामि।
अकिरियं परियाणामि, किरियं उवसंपज्जामि।
मिच्छत्तं परियाणामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि।
अबोहिं परियाणामि, बोहिं उवसंपज्जामि।
अमग्गं परियाणामि, मग्गं उवसंपज्जामि।

जं संभरामि जं च न संभरामि, जं पडिक्कमामि जं च न पडिक्कमामि, तस्स सव्वस्स देवसियस्स अइयारस्स पडिक्कमामि समणोहं–

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई॥

–खामणा-सुत्तं–

इच्छाकारेण संदिसह भयवं अब्भुट्ठिओहं अब्भिंतर देवसिय खामेउं जं किंचि अपत्तियं परपत्तियं भत्ते पाणे विणए वेयावच्चे आलावे संलावे उच्चासणे समासणे अंतरभासाए उवरिभासाए जं किंचि मज्झ विणयपरिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह अहं न याणामि तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

जीव-योनि

सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अपकाय, सात लाख तेजस्काय, सात

१. खड़े-खड़े प्रतिक्रमण करें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाख वायुकाय, दस लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय, दो लाख द्वीन्द्रिय, दो लाख त्रीन्द्रिय, दो लाख चतुरिन्द्रिय, चार लाख नारकी, चार लाख देवता, चार लाख तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य की जाति–चार गति चौरासी लाख जीव-योनि पर राग-द्वेष आया हो तो 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं'।

'पांचवां आवश्यक'

'मत्थएण वंदामि' पांचवे कायोत्सर्ग आवश्यक की आज्ञा।

इच्छामि ठाइउं काउस्सग्गं जो मे देवसिओ अइयारो कओ काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छियव्वो असमणपाउग्गो णाणे तह दंसणे चरित्ते समणाणं जोगाणं जं खंडियं जं विराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं.....। (ध्यान···लोगस्स[1].....णमुक्कार सुत्तं–ध्यान सम्पन्न)

छट्ठा आवश्यक

मत्थएण वंदामि छट्ठे प्रत्याख्यान आवश्यक की आज्ञा।

[2]अईअं पडिक्कमामि पडुप्पन्नं संवरेमि अणागयं पच्चक्खामि।[2]

सामायिक, चउवीसत्थव, वंदना, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग, प्रत्याख्यान–इन छहों आवश्यकों में जागरूकता न रखी हो, उच्चारण में न्यूनाधिकता की हो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

(दो बार नमोत्थु णं का पाठ बोलें।[3])

पहला णमोत्थु णं सिद्ध भगवान को, दूसरा णमोत्थु णं अरहन्त भगवान को तीसरा णमोत्थु णं मम धम्मा।यरियस्स धम्मोवदेसगस्स थवत्थुई मंगलं श्री श्री श्री श्री १००८ श्री श्री श्री गणाधिपति पूज्यगुरुदेव श्री तुलसी एवं आचार्यश्री महाप्रज्ञ को। (पांच बार नमस्कार मंत्र पढ़ें)

पंचपद वंदना

गुरु वंदना। ●●

---

१. लोगस्स का– दैवसिक और रात्रिक प्रतिक्रमण में ४, पाक्षिक में १२, चातुर्मासिक में २०, सांवत्सरिक में ४० का ध्यान करें।

२. दैवसिक और रात्रिक एक दिन के लिए, पाक्षिक-१५ दिन, चातुर्मासिक चार महीने एवं सांवत्सरिक–एक साल के लिए कोई प्रत्याख्यान अवश्य करें।

३. दूसरे नमोत्थु में ठाणं संपत्ताणं के स्थान पर 'ठाणं संपाविउकामाणं' ऐसा कहें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन विश्व भारती प्रकाशन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org